पीपल्स यूनियन फॉर डैमोक्रेटिक राइट्स

राजनैतिक मुकदमे का घातक नतीजा : यू.ए.पी.ए. और गढ़चिरोली सत्र न्यायालय का फैसला

गढ़चिरोली सत्र न्यायालय में चले मुकदमे का फैसला, जिसमें पाँच लोगों, जी.एन.साईबाबा, महेशी तिरकी, पांडू नरोटे, प्रशांत राही और हेम मिश्रा को आजीवन कारावास और विजय तिरकी को 10 साल की कैद की सज़ा सुनाई गई है, एक विचारधारा और नृशंस यू.ए.पी.ए. कानून द्वारा प्रतिबंधित संगठन के राजनैतिक अभियोजन का स्पष्ट उदाहरण है। इन छः अभियुक्तों को एक प्रतिबंधित संगठन सी.पी.आई. (माओवादी) का सदस्य होने का अपराधी ठहराया गया है और इसलिए उन्हें राजसत्ता के खिलाफ 'षड़यंत्र' करने का दोषी माना गया है, जबकि उनके खिलाफ, इस 'षड़यंत्र' को अंजाम देने के लिए किसी तरह का अपराध करने के कोई सबूत मौजूद नहीं हैं। उन पर यू.ए.पी.ए. के सैक्शन 13 (गैरकानूनी गतिविधि के लिए सज़ा), सैक्शन 18 (षडयंत्र के लिए सज़ा), सैक्शन 20 (किसी आतंकवादी संगठन या गैंग का सदस्य होने के लिए सज़ा), सैक्शन 38 (आतंकवादी संगठन की सदस्यता से जुड़े अपराध) और सैक्शन 39 (आंतकवादी संगठन की मदद करने से संबंधित अपराध) और आई.पी.सी. के सैक्शन 120 बी (राजनैतिक षडयंत्र के लिए सज़ा) आरोप लगे हैं। जबकि सत्ताधारियों ने यू.ए.पी.ए. का इस्तेमाल अपने खिलाफ 'षड़यंत्र' के लिए दंडित करने के लिए किया है, गढ़चिरोली का फैसला यह दर्शाता है कि यह कानून असल में सरकार के पास एक हथियार की तरह है जिसे उन लोगों के खिलाफ षड़यंत्र के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है जो सरकार के साथ किसी भी तरह की असहमति व्यक्त करें या जिनके सरकार के साथ कोई राजनैतिक मतभेद हों। ऐसे संगठनों को प्रतिबंधित करना, उनके साहित्य को गैरकानूनी बना देना, उनकी सदस्यता के लिए सज़ा देना यह सुनिश्चित करता है कि 'आतंकवादी गतिविधियों' और आतंकवादी संगठनों की आड़ में ऐसे संगठनों के असहमत विचार और राजसत्ता द्वारा अपने ही लोगों के खिलाफ चलाए जा रहे युद्ध की जानकारी को दबाया जा सके।

बेहद कमज़ोर आधार पर 'आंतकवादी अपराध' गढ़ना : फैसले में छः अभियुक्तों की 'आतंकवादी गतिविधियों' के लिए ऐसा दावा पेश किया गया है जिसके लिए रत्ती भर सबूत मौजूद नहीं है। जिन छः लोगों को सज़ा दी गई है उनके पास से कोई भी रसायन, हथियार, विस्फोटक, बहुत सारा पैसा या कुछ भी ऐसा बरामद नहीं हुआ है जिसे 'हिंसात्मक कार्यवाही' के षड़यंत्र से जोड़ा जा सके। उनके खिलाफ पूरा मामला केवल प्रतिबंधित संगठन की सदस्यता पर टिका हुआ है जिसमें संगठन की 'मदद' करने या संबंधित आतंकवादी अपराधों में शामिल होने के सबूत के रूप में उनके पास 'नक्सल साहित्य' होने के अलावा कुछ भी नहीं है। गढ़चिरोली फैसला इस बात का एक अच्छा उदाहरण है कि यू.ए.पी.ए. के प्रावधानों को अगर साथ में देखा जाए तो वे किस तरह से अभियुक्त के खिलाफ जाते हैं। एक बार एक व्यक्ति पर यू.ए.पी.ए. के तहत प्रतिबंधित आतंकवादी संगठन की सदस्यता का आरोप लग जाए तो वह शुरू से ही प्रतिकूल परिस्थिति में पड़ जाता है क्योंकि तहकीकात और अभियोजन एजेंसियों की निगाह में यह सदस्यता एक जघन्य अपराध है। इस तरह से पुलिस द्वारा 'बरामद' साहित्य 'आतंकवादी संगठन का प्रचारक साहित्य' बन जाता है जो कि 'प्रतिबंधित सी.पी.आई. (माओवादी) और उसके खुले संगठन आर.डी.एफ. के सदस्यों और अन्य लोगों के बीच बांटा जाने वाला था जिससे हिंसा, सार्वजनिक अव्यवस्था और केन्द्रीय और राज्य सरकार के खिलाफ बड़े स्तर पर वैमनस्य फैलाया जाना था' (पैरा 22)। एक बार एक व्यक्ति पर आंतकवाद विरोधी कानून के तहत आरोप लग जाए तो न्याय का रास्ता राजनैतिक सोच की बलि चढ़ जाता है।

प्रतिबंधित संगठन की सदस्यता : किसी संगठन को गैरकानूनी, आंतकवादी संगठन या आतंकवादी गैंग घोषित किया जाना यू.ए.पी.ए. के तहत एक कानूनी प्रक्रिया की शुरूआत कर देता है जिससे एक व्यक्ति को सिर्फ इसकी सदस्यता के अपराध के लिए पकड़ा जा सकता है, और क्योंकि उन्हें अपराधी मान लिया जाता है इसलिए उनका कोई भी पत्र व्यवहार, बैठक या उनके पास से मिलने वाला साहित्य इस सदस्यता का सबूत मान लिया जाता है। इसे बयानी/वर्नात्मक तर्क के रूप से 'संगति के आधार पर अपराध' माना जाता है। इस तरह से कानूनी मदद देना, इलाज करना, सूचना मांगना या 'नक्सल साहित्य' रखना सभी अपने आप में 'आतंकवादी' गतिविधियाँ बन जाते हैं। सिर्फ इसलिए क्योंकि संगठन प्रतिबंधित है।

यू.ए.पी.ए. जैसे आंतकवाद विरोधी कानून राजसत्ता को जिस तरह ही छूट दे देते हैं उसे देखते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने अरूप भुइया बनाम आसाम सरकार (2011, 3 एससीसी 377) और श्री इंदिरा दास बनाम आसाम राज्य (2011, 3 एससीसी 380) मामलों में यह फैसला दिया था कि केवल किसी प्रतिबंधित संगठन की सदस्यता के आधार पर किसी व्यक्ति पर आई.पी.सी. के सैक्शन 124 ए या यू.ए.पी.ए. के तहत अपराध का इल्ज़ाम लगाकर, उसे दोषी नहीं ठहराया जा सकता। गढ़चिरोली सत्र न्यायालय के इस फैसले में जिस तरह से सर्वोच्च न्यायालय के तर्क की घोर उपेक्षा और अवहेलना की गई है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि राजसत्ता किस तरह से संगठनों को प्रतिबंधित करने और उनकी सदस्यता का इस्तेमाल, कोई आपराधिक गतिविधि साबित किए बिना, अपने राजनैतिक प्रतिद्वंदी खड़े करने और फिर उनको खत्म करने के लिए कर रही है।

षड़यंत्र के दायरे का विस्तार : आई.पी.सी. के सैक्शन 120 बी के तहत आपराधिक षड़यंत्र साबित करने के लिए अभियुक्त और संगठन के बीच किसी तरह का कोई संपर्क, चाहे छोटा सा ही, दिखाया जाना ज़रूरी था। पर यू.ए.पी.ए. में षड़यंत्र के दायरे को और भी बढ़ा दिया गया है – इसमें कोई भी व्यक्ति जो की दूर से या किसी भी तरह से संगठन से जुड़ा हो, संगठन का हिस्सा माना जा सकता है। इस तरह से किसी के पास से 'नक्सल साहित्य' मिलना, पत्र व्यवहार, पर्चे, दस्तावेज वगैरह मिलना अपराध के सबूत के नये मानक बन गये हैं। यह एक अजीब विसंगति है कि जबकि अपने विचारों का प्रचार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का मौलिक अधिकार है, सरकार की आलोचना को 'नक्सल साहित्य' का नाम दे दिया जाए। 1950 तक में रोमेश थापर बनाम मद्रास राज्य मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने यह फैसला दिया था कि अभिव्यक्ति की

स्वतंत्रता किसी साहित्य के परिसंचरण द्वारा ही सही तरह से लागू हो सकती है। यहाँ तो किसी प्रतिबंधित संगठन के साहित्य को साझा करना ही अपराध का सबूत बन जाता है!

निंदनीय प्रक्रियाएं : जबकि यू.ए.पी.ए. के तहत अपराध अधिक बड़े बन जाता हैं तो ऐसे में यह अपेक्षा की जा सकती है कि सबूत से संबंधित नियम भी कड़े होंगे ताकि यह नियम सुनिश्चित हो सके कि बड़े अपराध के लिए सबूत के नियम कड़े होने चाहिए। पर इसके उलट असलियत यह है कि एक बार यू.ए.पी.ए. लगा दिये जाने के बाद कानूनी प्रक्रियाएं अत्यधिक ढीली हो जाती हैं क्योंकि अपराध के अधिक बड़े होने और दोष को बिना प्रमाण के ही स्वीकार लिया जाता है।

- इस मामले में साहित्य की तथाकथित ज़ब्ती और डिजिटल सबूत ही संदेह के घेरे में हैं। जी.एन.साईबाबा के घर की तलाशी के समय कोई भी स्वतंत्र गवाह मौजूद नहीं था और कोई भी सामान उनके सामने सील नहीं किया गया था। अभियोजन ने यह दावा किया कि तलाशी का वीडियो बनाया गया था, पर न तो वीडियो बनाने वाले को मुकदमे के दौरान पेश किया गया और न ही वीडियो दिखाया गया। जिसका नतीजा यह है कि साई बाबा के घर से कथित रूप से ज़ब्त चीज़ों की सूची में दी गईं 52 में से 41 चीज़ों के बारे में बहुत सी शंकाएं हैं।

- हेम मिश्रा के पास से कथित रूप से बरामद 16जीबी मेमोरी कार्ड के बारे में भी शंकाएं हैं क्योंकि अभियोजन पक्ष का गवाह इसे नहीं पहचान सका और एक कार्ड, पैन ड्राइव और ब्लू टुथ के बीच फर्क तक नहीं कर सका।

- जब बचाव पक्ष के वकील ने यह मांग की कि तीन अभियुक्तों के पास मिले मोबाइल फोनों के रिकॉर्ड पेश किए जाएं, जिससे यह साबित हो सकता था कि उन्हें 20 अगस्त 2013 को बलारशाह जंक्शन से गिरफ्तार किया गया था, 22 अगस्त 2013 को अहीरी बस स्टैंड से नहीं, तो यह मांग नहीं मानी गई। यह बहुत ही महत्वपूर्ण था क्योंकि अहीरी से दो दिन बाद की गिरफ्तारी दिखा कर पुलिस दो दिन की गैरकानूनी हिरासत, ज़बर्दस्ती इकबालिया बयान हासिल करने के आरोपों से बच गई और इससे यह मुकदमा नक्सल प्रभावित गढ़चिरोली जिले के अधिकार क्षेत्र में आ गया।

गुनाहगार साबित होना और सज़ा : बिना कोई जघन्य अपराध किये, बिना किसी ऐसे अपराध की तैयारी के सबूत के, केवल प्रतिबंधित साहित्य के साथ पाए जाने के आधार पर हुए इस दोषारोपण से पाँच लोगों को आजीवन कारावास और एक को दस साल की सज़ा दे दी गई है। और तो और जज ने अफसोस प्रकट किया कि 'आजीवन कारावास पर्याप्त सज़ा नहीं है पर कोर्ट के हाथ बंधे हुए हैं .....' (पैरा 1014)। जज का यह कथन उनके व्यक्तिपरक पूर्वाग्रह का खुलासा करता है। अपराध और सज़ा के बीच के तालमेल की जज ने पूरी तरह से धज्जियाँ उड़ा दी हैं।

827 पृष्ठों के फैसले को ध्यान से पढ़ने पर पता चलता है कि एक तरफ महेश, विजय और पांडू के खिलाफ आरोपों में सबूतों का अभाव है तो दूसरी तरफ जी.एन.साईबाबा, प्रशांत राही और हेम मिश्रा के खिलाफ मामला ऐसी इलैक्ट्रोनिक सामग्री के आधार पर उनके प्रतिबंधित संगठन के सदस्य होने के दावे पर टिका है जिसके बारे में घोर संदेह है कि वह मिली कहाँ से है। सबूतों का न होना या सबूतों में अंतर, पाँचों आरोपियों की भागीदारी और भूमिका की सीमा में अंतर उन्हें एक जितनी सज़ा यानी कि अपने प्राकृतिक जीवन के अंत तक कारावास, दिए जाने के रास्ते में नहीं आया। गढ़चिरोली फैसला सबसे हाल का यू.ए.पी.ए. के तहत आया फैसला है परन्तु यू.ए.पी.ए. का राजनीति से प्रेरित मुकदमों का लंबा इतिहास है जिसमें एक के बाद एक सरकारों ने व्यक्तियों, संगठनों और संघों को अछूत घोषित करके प्रताड़ित किया है।

हमारा मानना है कि इन तीन राजनैतिक बंदियों को उनके राजनैतिक विचारों के लिए दंडित किया गया है किसी हिंसात्मक अपराध के लिए नहीं। उन्हें उनके राजनैतिक दृष्टिकोण का अनुमोदन करने के अधिकार से वंचित किया गया है और मतभेद व्यक्त करने के अपने संवैधानिक अधिकार के इस्तेमाल के लिए तिरस्कृत किया गया है। इस सबको देखते हुए पी.यू.डी.आर. उच्च स्तरीय न्यायपालिका से यह आग्रह करता है कि वह इस हानिकारक फैसले को पलट दे और इस मुद्दे को भी संबोधित करे कि उदार न्यायशास्त्र के सभी सिद्धांतों का हनन करने वाले यू.ए.पी.ए. जैसे कानून को कैसे लागू रखा जा सकता है, जिसका अस्तित्व ही भारतीय संविधान की अवमानना और अपमान करता है।

पी.यू.डी.आर. मांग करता है कि

1. जी.एन.साईबाबा, महेशी तिरकी, पांडू नरोटे, प्रशांत राही, हेम मिश्रा, और विजय तिरकी को तुरंत रिहा किया जाए।

2. यू.ए.पी.ए. को रद्द किया जाए।

पीपल्स यूनियन फॉर डैमोक्रैटिक राइट्स, दिल्ली

Website: http://pudr.org/

Email: pudrdelhi@gmail.com